Introduction

प्राक्कथन

साहित्य के मूल्य और जीवन-दर्शन समाज से भिन्न नहीं होते हैं। समाज के रंग ही साहित्य में विकीर्ण होते रहते हैं। यही कारण है कि समाज के परिवर्तित स्वरूप और मूल्यों का प्रतिफलन साहित्य में सहज रूप से मिलता है। साहित्यकार अपने साहित्य के अन्तर्गत समाज के मूल्यों को अंकित करता है। मूल्य-विहीन साहित्य निरर्थक होता है क्योंकि जीवन मूल्य ही साहित्य व समाज को गतिशील बनाते हैं। इसलिए साहित्य व समाज के मूल्य भिन्न नहीं हो सकते, प्रत्येक युग के साहित्य में कुछ सनातन तत्व विद्यमान रहते हैं। जीवन रूपी रथ चक्र की धुरी मूल्य है, जो जीवन को संतुलित बनाये रखती है, यही स्थिति साहित्य की भी। किन्तु यह उल्लेखनीय है कि जीवन के बदलते हुए परिवेश में मूल्यों के बाह्य मान दण्ड, दृष्टिकोण, प्रतिमान, आदर्श, धारणा आदि भी बदलते रहते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि साहित्य तद्युगीन जीवन-मूल्यों को ग्रहण करता है और नवीन मूल्यों के द्वारा समाज को गतिशील बनाता है। यद्यपि ये सम-सामयिक जीवन मूल्य पूर्ववर्ती युग से नितान्त असम्बद्ध नहीं होते, ये प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से अपनी परम्परा से जुड़े रहते हैं।

उपन्यास में मानवीय मूल्यों, अन्तश्चेतना की क्रियाओं का विस्तृत एवं गहराई के साथ अभिव्यक्त होती हैं। यह सामाजिक अंतक्रिया का यथार्थ चित्र उपस्थित करने का अनूठा माध्यम है। यह एक ऐसी विधा है, जो विशाल चित्र फलक के आधार पर मानव की संवेदनाओं, आकांक्षाओं, क्रिया-कलापों, व्यवहारों, जीवन-मूल्यों, मानसिक-संकल्पों एवं उसकी अभिरुचियों को रूपाकार करती है, क्योंकि उपन्यासकार पर किसी प्रकार का कोई प्रतिबंध नहीं होता, इसीलिए उसे अपनी कलम का जौहर दिखाने का अधिक अवसर प्राप्त होता है। यही इस विधा की सबसे बड़ी विशेषता है। इसलिए जीवन का गहन व सम्पूर्ण चित्रण इसमें विस्तार से प्राप्त होता है। यही कारण है कि विश्व साहित्य में जितनी अधिक उन्नति उपन्यास साहित्य ने की है, उतनी अन्य किसी विधा ने नहीं की। उसमें समसामयिक जीवन के साथ-साथ उस के मूल्यों,

आदर्शों, मर्यादाओं का यथातत्व अंकन होता है ।

आज के इस भौतिक वादी युग में सर्वत्र मूल्य क्रान्ति दृष्टिगत होती है । आधुनिक मानव परम्परागत जीवन-मूल्यों के प्रति आक्रोश अभिव्यक्त करता हुआ , नवीनता की ओर आकर्षित हो रहा है । परिणामतः जीवन-परिस्थितियों में परिवर्तन के साथ-साथ मानव जीवन मूल्यों, प्रतिमानों, आदर्शों, सद्वस्तुओं, संकल्पों, जीवन दर्शन आदि में भी परिवर्तन दृष्टि-गोचर हो रहा हैं । वस्तुतः पिछले दो दशकों में समस्त मानव जाति के समक्ष जैसे मोह भंग की स्थिति उपस्थित हो गयी है - जैसे उस पर अर्ध सुषुप्त अवस्था में प्रबुद्ध प्रहार हुआ है । वह नवीन जीवन-दर्शन तथा नये मूल्य खोजने लगा है । किन्तु अभी तक उसकी खोज बनी हुई है । उसके समक्ष बदलते हुए परिवेश में प्राचीन जीवन-मूल्य एक चुनौती बन गये हैं । फिर भी वह प्राचीन मूल्यों को सर्वथा त्याग नहीं पाया है । इसलिए व्यक्ति दिशाहीनता, मूल्य हीनता तथा छटपटाहट का अनुभव कर रहा है और उपन्यासों में भी आधुनिक मानव की वैचारिक एवं बौद्धिक संक्रान्ति से गुजरती हुई नयी मानसिकता का चित्रण अंकित है । आधुनिक मानव पाश्चात्य शिक्षा प्रभाव वैज्ञानिकता आदि के कारण नीवन-मूल्यों के प्रति आकर्षित तो हो रहा है,किन्तु अपने को प्राचीन संस्कारों व मूल्यों से सर्वदा मुक्त नहीं कर पा रही है । वह, अभी तक अपने परम्परागत आचार-विचारों, मान्यताओं धारणाओं के प्रति लगाव रखे हुए है , समकालीन व्यक्ति की इसी ऊहापोह को साठोत्तरी उपन्यासों के माध्यम से समझने का प्रयास प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के माध्यम से किया गया है ।

यह उल्लेखनीय है कि हिन्दी उपन्यास साहित्य में साठोत्तर युग मूल्यों के उतार चढ़ाव का युग है । यदि यह कहा जाय कि इस युग से उपन्यासों में एक नवीन शैली, वैचारिकता , और आधुनिकता का सूत्रपात

हुआ तो अतिश्योक्ति न होगी । साठोत्तर युग हिन्दी उपन्यासों की परम्परा को नवीन मोड़ प्रदान करता है । यही कारण है कि युगीन उपन्यासों में व्यक्तिगत, सामाजिक , राजनीतिक , धार्मिक व आर्थिक जीवन मूल्यों के प्रति नया दृष्टिकोण परिलक्षित होता है । इस समस्त प्रक्रिया को समझने के लिए ही इस शोध-प्रबन्ध का आरम्भिक काल - "साठोत्तर" निर्धारित किया है । साठोत्तर उपन्यासों में जीवन मूल्यों की स्थिति क्या है, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध इस दिशा का हमारा विनम्र प्रयास है ।

अध्ययन की दृष्टि से यह शोध प्रबन्ध सात अध्यायों में विभक्त है । प्रथम अध्याय में जीवन और जीवन मूल्यों की परिभाषा देते हुए, मूल्यों के लक्षणों में - सद्वस्तु , आदर्श , मूल्यानुभूति , प्रतिमान, संकल्प या अवधारणा - अंकित किये हैं । तत्पश्चात् मूल्यों का सैद्धान्तिक वर्गीकरण : §1§ व्यक्तिगत मूल्य §2§ आध्यात्मिक मूल्य §3§ सामाजिक मूल्य और §4§ राजनीतिक मूल्य प्रस्तुत किया है । साहित्य और जीवन-मूल्यों का परस्पर संबंध स्पष्ट करते हुए हिन्दी के साठोत्तरी उपन्यासों में जीवन-मूल्यों का महत्व प्रतिपादित किया गया है । निष्कर्ष रूप में जीवन-मूल्यों के लक्ष्य को स्पष्ट करते हुए उसका स्वरूप निर्धारित हुआ । यह मानव जीवन को स्थायी ही नहीं अपितु अनेक महत्वपूर्ण उपायों के माध्यम से उसे उत्कृष्ट भी बनाता है । वह मानव की समस्त आवश्यकताओं, अभिलाषाओं तथा आकांक्षाओं की पूर्ति का साध्य और साधन है । व्यक्तिगत मूल्य ही समाजगत मूल्यों के विकास में सहायक होते हैं और राजनीतिक तथा समाजगत मूल्यों की अपेक्षाकृत आध्यात्मिक मूल्य स्थायी और शाश्वत होते हैं । जीवन-मूल्य न नष्ट होते हैं न परिवर्तित । परिवर्तित स्वरूप इनका विकसित रूप है । बदलती हुई परिस्थितियों के साथा-साथ मानवीय दृष्टिकोण बदलते रहते हैं और इसके साथ साथ जीवन-मूल्य दृष्टि भी बदलती रहती है ।

क्योंकि दृष्टिकोण से ही जीवन मूल्य निर्मित होते हैं । जिनका अंकन समसामयिक उपन्यासों में गहराई तथा विस्तृत रूप से पाया जाता है । द्वितीय अध्याय युगगत जीवन-मूल्यों के विश्लेषण से संबंधित है , जिसके अन्तर्गत- पूर्व पीठिका पूर्व युगीन जीवन-मूल्य एवं युगगत जीवन-मूल्य §सन् 1960 के बाद§ का तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत किया गया है । तदनंतर जीवन-मूल्यों को प्रभावित करने वाली प्रवृत्तियों में : §1§ नैतिकता की टूटती हुई मान्यताएं §2§ सामाजिक प्रवृत्तियों §3§ वैयक्तिकचेतना §4§ राजनीतिक और आर्थिक प्रवृत्तियों - का विस्तृत अध्ययन किया गया है । साथ ही मूल्यों के विकास के अन्तर्गत : §1§ §क§ व्यक्तिगत जीवन में स्वच्छन्द यौनवृत्ति §ख§ परम्परा के प्रतिविद्रोह की चेतना §ग§ जातिव्यवस्था के प्रति नया दृष्टिकोण §2§ §क§ पारिवारिक संबंधों का पतन और नये आयाम §ख§ सामाजिक रीतियों के प्रति नये दृष्टिकोण बौद्धिकता §ग§ सामाजिक वर्गों के नये प्रतिमान §3§ §क§ बौद्धिकता और उसका प्रभाव §ख§ विज्ञान की उन्नति के कारण विकसित नया दृष्टिकोण : जज्जन्य परिस्थिति §ग§ मानसिक कुण्ठाए = तनाव इत्यादि §4§ §क§ आर्थिक जीवन, औद्योगीकरण और नयी वर्ग चेतना §ख§ राजनीतिक गतिविधियों और उनसे विकसित चेतना और जीवन-मूल्य का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया है । अन्त में निष्कर्ष रूप में साठोत्तर जीवन-मूल्यों की विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है । पूर्व-युगीन जीवन-मूल्य समसामयिक परिवेश में आकर टूटने लगे हैं । समकालीन कुछ नये मूल्य विकसित हुए हैं । भारतीय परम्परागत जीवन-मूल्य पाश्चात्य प्रभाव शिक्षा, बौद्धिकता आदि के कारण नवीन कलेवर धारण कर रहे हैं । स्वच्छन्द यौन वृत्ति से जहाँ एक ओर जाति बंधन की सीमाओं को शिथिल किया है , वहाँ दूसरी ओर नैतिक मूल्यों की मान्यतायें टूटी हैं । परिणामत: पारिवारिक संबंधों का पतन, धार्मिक तथा आचरण संबंधीमूल्यों का ह्रास दृष्टिगोचर है । वैज्ञानिकता, जाति-व्यवस्था के टूटने से समानता,सहयोग

भाई-चारे, मैत्री, अस्तित्व-बोध, सहानुभूति आदि नये जीवन-मूल्य सामने आये हैं ।

पुरानी पीढ़ी व नई पीढ़ी के उपन्यासकारों की वैचारिकता का अन्तर स्पष्ट करने के लिए तृतीय व चतुर्थ अध्याय को माध्यम बनाया गया है । तृतीय अध्याय में पूर्ववर्ती उपन्यासकारों का विवेचन प्रस्तुत किया गया है - जो सन् 1960 ई॰ के पश्चात् की लेखन कार्य में प्रवृत रहे हैं । ऐसे लेखक परम्परागत जीवन-मूल्यों , आदर्शों , मान्यताओं तथा संस्कारों के प्रति आस्थावान रहे हैं और अपने उपन्यासों में युगीन समस्याओं को यथार्थवादी दृष्टिकोण से परखा तो है , किन्तु उनका समाधान आदर्श मिश्रित होने के कारण प्रासंगिक नहीं बन पाया है । यही कारण है कि इन के पात्र यथार्थ की भूमि पर चलते हुए आदर्शवादी विचार धारण से प्रभावित रहे हैं । नरेश मेहता, अमृतलाल नागर, पणेश्वर नाथ रेणु आदि उपन्यासकारों से सामाजिक समस्याओं की गुत्थियों को सुलझाने का अथक प्रयास किया है । इनके पात्र समाजगत मूल्यों की लीक पर चलेते हैं । यद्यपि यशपाल, भगवती चरण वर्मा जैनेन्द्र ,अश्क, जोशी आदि उपन्यासकारों ने स्वच्छन्द यौन कुण्ठा, वर्गचेतना व्यक्तिवादी दृष्टिकोण का चित्रण किया है । परन्तु व्यावहारिक जीवन तक नहीं पहुँच पाया है, जितना सन् 1960 के उपरान्त लेखन आरम्भ करने वाले उपन्यासकारों ने किया , उतना वे नहीं कर पाये । यह कारण है कि इनकी कृतियों में सामाजिक, व्यक्तिगत , राजनीतिक, आध्यात्मिक तथा आर्थिक जीवन-मूल्यों के अंकर्म में स्वाभाविकता आई ।

चतुर्थ अध्याय के अन्तर्गत उन उपन्यासकारों की कृतियों की विवेचना प्रस्तुत की गयी है , जिनकी रचनाएँ सन 1960 ई॰ के बाद प्रकाश में आयी। इन उपन्यासकारों की रचनाओं पर जीवन-मूल्यों के दृष्टिकाण से सिंहावलोकन किया गया है 2 तत्पश्चात् तृतीय व चतुर्थ अध्यायों का समग्र रूपेण मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है । समकालीन लेखकों की कृतियों के पात्र मुख्यत: काम

व अर्थ के आधार पर परम्परागत जीवन मूल्यों से विद्रोह करते हुए परिलक्षित होते हैं । इनके उपन्यासों में परिवेशगत जटिलताओं से उत्पन्न दाम्पत्य जीवन का विघटन स्वअस्तित्व की भावना और स्वच्छन्द यौन वृत्ति की कारण मनमुटाव की स्थिति, तलाक आदि का चित्रण विशेषत: दृष्टिगोचर है । इनकी सब से बड़ी विशेषता यह है कि इनके पात्र सशक्त जीवनगत समस्याओं से संघर्षरत और वैयाक्तिक चेतनाओं से युक्त होते हैं किन्तु मानसिक तनाव तीव्रता काम कुण्ठा , आदर्शहीनता, मूल्यहीनता, अकेलेपन, अजन जीवन फैशन-परस्ती आदि दुष्प्रवृत्तियों के कारण व्यक्तिगत सामाजिक धार्मिक राजनीतिक तथा नैतिक मूल्यों का नकारा गया है । दिशाहीनता, भटकन की स्थिति में चित्रित होते हैं । नारी स्वातंत्र्य - भावना इन उपन्यासों की सबसे बड़ी उपलब्धि है ।

पंचम अध्याय व्यक्तिगत जीवन-मूल्यों से संबंधित है । इसके अन्तर्गत नये दृष्टिकाण एवं बौद्धिकता का प्रभाव, व्यक्तिगत जीवन में स्वच्छन्द यौन वृत्ति, परम्पराओं के प्रति विद्रोह की चेतना , मानसिक तनाव व कुण्ठा और निष्कर्ष के साथ व्यक्ति और समाज विषयक द्वन्द्व - उपयुक्ति समस्त तथ्यों का साठोत्तरी औप्यासिक परिवेश में चित्रण किया गया है । निष्कर्ष रूप में यह दृष्टिगत है कि सन् 1960 ई• के उपन्यासों में व्यक्ति का नया व्यक्तित्व उभर कर सामने आया है । व्यक्तिगत नये दृष्टिकोण एवं बौद्धिकता के कारण व्यक्तिगत जीवन में परम्पराओं , रीति रिवाजों मान्यताओं धारणाओं आदि के प्रति आक्रोश अभिव्यक्त किया है । स्वच्छन्द यौन वृत्ति के कारध व्यक्ति के मन मस्तिष्क में तनाव, कुण्ठा व धार्मिक मूल्यों के प्रति आस्था प्राय: लुप्त होती जा रही है । इससे जहाँ एक ओर सामाजिक नैतिक व आचरण संबंधी मूल्यों का ह्रास हुआ , वहाँ दूसरी ओर व्यक्ति स्वातंत्र्य, नारी-चेतना अंह की भावना, नये दायित्व बोध आदि नवीन जीवन मूल्यों का निर्माण और विकास हुआ है ।

षष्ठ अध्याय में उपन्यासों के माध्यम से जीवन-मूल्यों को विस्तृत

रूपेण चित्रित किया गया है । इसमें आमुख प्रस्तुत करते हुए बदलते हुए दृष्टिकोण , समाजवादी चेतना , मानवतावाद, पारिवारिक संबंधों का पतन एवं नये आयाम, सामाजिक रीति रिवाजों के प्रति नये दृष्टिकोण, सामाजिक वर्गों के नये प्रतिमान, जाति व्यवस्था के प्रति नये दृष्टिकोणों, के उपन्यासों के उदाहरणों सहित प्रस्तुत किया गया है एवं अन्त में समग्र अध्याय का मूल्यांकन किया गया है । निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि नवीन परिवेशगत परिस्थितियों के कारण जातिव्यवस्था तथा प्राचीन रीति नीति एवं मान्यताएं टूटती हुई दृष्टिगोचर है तो वहीं पारिवारिक नये संबंध, वर्गचेतना आदि समाज में निर्मित एवं विकसित हो रहे हैं । उपन्यासों के आधार पर यह लक्ष्य किया जा सकता है कि आधुनिक समाज में व्यक्तिगत मूल्यों में विघटन हुआ है , किन्तु सामाजिक मूल्य आज भी अपना अस्तित्व किसी न किसी रूप में बनाये हुए हैं । जैसे - विवाह, संस्कार, सामाजिक दायित्व, सेवा , त्याग दाम्पत्य प्रेम, वात्सल्य , आज्ञापालन आदि । हाँ, उनके बाह्य रूप में परिवर्तन अवश्य आ रहा है ।

सप्तम् अध्याय में आलोच्य उपन्यासों के परिप्रेक्ष्य में राजनीतिक और धार्मिक जीवन-मूल्यों का विवेचन किया गया है, जिसके अन्तर्गत तत्कालीन राजनीतिक, परिस्थितियों का अंकन और जीवन मूल्य, दलीय राजनीतिक, आर्थिक जीवन और समसामयिक आन्दोलन तथा जीवन मूल्य , राजनीतिक जीवन के नये मोड़ और जीवन-मूल्य , विदेशी नीति और तज्जन्य जीवन मूल्य , साम्प्रदायिक समस्या और मूल्य विकास की भूमियाँ, राजनीतिक चेतना का स्वरूप तथा मूल्य विघटन तथ्यों का स्पष्टीकरण किया गया है । अन्त में यह निर्दिष्ट किया गया है कि तत्कालीन राजनीति अपने आदर्शों से च्युत होती जा रही है । देश सेवा , राष्ट्रीय प्रेम ,त्याग, लोकहित आदि की भावना तिरोहित हो रही है और इसके स्थान पर भ्रष्टाचार, भाई भतीजावाद, साम्प्रदायिकता, रिश्वतखोरी, जमाखोरी, तस्करी इत्यादि दुष्प्रवृत्तियाँ जन्म ले चुकी हैं । इस युग की छिछली राजनीति से

गाँव-गाँव को अपनी चपेट में ले रखा है । राजनीतिक परिस्थितियों ने सामाजिक दैनिक जीवन के साथ साथ ईमानदारी मैत्री, सहयोग बंधुत्व की भावना आदि को प्रभावित भी किया है ।

अन्त में उपसंहार के रूप में पूर्ववर्ती समस्त अध्यायों के निष्कर्षात्मक बिन्दुओं का अंकन किया गया है । तत्युगीन समाज में सामाजिक मूल्य अपना अस्तित्व बनाये हुए हैं । जबकि धार्मिक व आध्यात्मिक मूल्यों का ह्रास होने लगा है । वैयक्तिक चेतना ने सर्वाधिक मूल्यों को प्रभावित किया है । शिक्षा, बौद्धिकता , वैज्ञानिकता, पाश्चात्य प्रभाव तथा आर्थिक विषमता के कारण परम्परागत पारिवारिक संबंधों, विशेषकर पति-पत्नी के मध्य मन-मुटाव, रीति-रिवाजों के प्रति अनास्था, लोकाचारों व मान्यताओं के प्रति विद्रोह की भावना परिलक्षित होती है । व्यक्तिगत स्वच्छन्द यौन-वृत्ति ने नैतिक मूल्यों व आचरण संबंधी धारणाओं को सर्वाधिक आघात पहुंचाया है । घर-घर में अपना झण्डा फहराती हुई राजनीति ने सत्य, अहिंसा, ईमानदारी, सद्भाव, भाईचारे आदि मूल्यों को ह्रासोन्मुख किया है ।

इन समस्त उक्त प्रवृत्तियों ने मिलकर आधुनिक मानव के जीवन को निराश, कुण्ठा, घुटन , तनावयुक्त बना दिया है । आज का व्यक्ति अपनी परिस्थितियों से संघर्षरत है । वह परम्परागत मूल्यों के प्रति विद्रोहात्मक दृष्टिकोण अपनाए हुई है । वस्तुतः मूल्यों का भंजक युवा वर्ग ही है । उसमें सर्वाधिक असंतोष व क्रान्ति की भावना व्याप्त है । पुरानी पीढ़ी अभी तक मूल्यों के प्रति आस्थावान् है ।

आधुनिक युग में वैयक्तिक अर्थ व काम के आधार पर नैतिकता, पवित्रता, ईमानदारी सहयोग , सद्भाव पुरानी मान्यतायें आदि अस्तित्व-हीन सी होने लगी हैं । दाम्पत्य-प्रेम, वात्सल्य-प्रेम, आज्ञापालन, सामाजिक रीति-रिवाज व मान्यातायें, माता-पिता की सेवा भाव आदि अभी भी समाज में कायम हैं । किन्तु कुछ नवीन कलेवर धारण किये हुए हैं । और

तत्कालीन परिस्थितियों से उत्पन्न, सहानुभूति, समानता, विश्व-बन्धुत्व स्वतंन्त्रता, मानवता, वैयक्तिक स्वातन्त्र्य, अस्तित्व बोध आदि नये मूल्य भी समाज में परिलक्षित हो रहे हैं ।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध से यह स्पष्ट होता है कि यद्यपि समाज में सर्वत्र मूल्य-क्रान्ति दृष्टिगोचर है , तथापि कुछ परम्परागत मूल्य, विवाह, दाम्पत्य संबंध, प्रेम, वात्सल्य प्रेम, सेवाभाव, ईमानदारी, सच्चाई समाज कल्याण आदि मूल्य समाज में अस्तित्ववान् हैं , किन्तु इन मूल्यों के मान दण्ड नवीन परिवेश में आकर युगीन प्रभाव से सर्वथा अछूते नहीं रहे हैं । वस्तुतः ये किंचितमात्र परिवर्तन लिए हुए हैं । इस शोध-प्रबन्ध से यह भी निष्कर्ष निकलता है कि समाज व साहित्य में सामाजिक मूल्यों के स्थान पर व्यक्तिवादी जीवन मूल्यों को अत्याधिक महत्व दिया जा रहा है , यद्यपि समाज की सर्वथा उपेक्षा नहीं की गयी है । भौतिकवादी युग की विभिन्न उपलब्धियों के कारण, धार्मिकाडम्बर, अज्ञान-जनित रूढ़ियाँ व अन्धविश्वास टूट रहे हैं और आध्यात्मिक मूल्य शनैः शनैः धूमिल पड़ रहे हैं , तथापि ग्रामीण जीवन में भारतीय परम्पराओं, आदर्शों , रीति-रिवाजों मान्यताओं प्राचीन संस्कृति एवं जीवन मूल्यों के प्रति मोह भंग नहीं हो पाया है । जीवन मूल्यों से संबंधित उपन्यासों के विश्लेषण से इस निष्कर्षात्मक बिन्दु पर पहुंचा जा सकता है कि पुरानी पीढ़ी के पात्र अभी तक ~~जीवन~~ प्राचीन जीवन मूल्यों को अपनाए हुए हैं । जब कि नई पीढ़ी के पात्रों में प्रायः परम्परागत जीवन मूल्यों के प्रति विद्रोह की चेतना परिलक्षित होती है । इस उहापोह का चित्रण समकालीन उपन्यासों में अंकित है ।

सर्वप्रथम मैं उन कृतिकारों, विद्वानों तथा समीक्षकों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिनकी सर्जनात्मक और वैचारिक उपलब्धियों का प्रयोग, मैंने इस शोध-प्रबंध में किया है ।

शोध-निर्देशक , मेरे पूज्य एवं हिन्दी साहित्य के लब्ध-प्रतिष्ठित

विद्वान प्रो॰ मदन गोपाल गुप्तजी का किन शब्दों में आभार व्यक्त करूँ जिनके चिन्तन परक, सुयोग्य एवं स्नेहिल निर्देशन में मुझे यह शोध कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । उनके उदार व्यक्तित्व एवं अपार पाण्डित्य के प्रश्रय में रहकर जो कुछ अर्जित किया , उसका ही प्रस्तुत रूप यह शोध-प्रबन्ध है । मेरे शोध कार्य के प्रति उन्होंने जो अभिरुचि व्यक्त की उसके स्मरण मात्र से ही मैं नत सिर हो जाता हूँ । एस॰पी॰ यूनिवर्सिटी विद्यानगर के हिन्दी विभागाध्यक्ष एवं साहित्य के प्रतिष्ठावान् आलोचक डा॰ शिव कुमार मिश्रजी ने समय पर अपने अमूल्य सुझाव प्रदान कर मेरा मार्ग-दर्शन किया । अतः मैं उनका हृदय से आभारी हूँ । भ्रातृ-तुल्य डा॰ अशोक कुमार मिश्रा के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ , जिन्होंने प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में सहायता प्रदान की है ।

=000000=